P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-4* ISSUE-7* March- 2017
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

सनाद्यन्त धतुनिष्ठ प्रत्ययों का परिगणन

मीरा कुमारी
शोध छात्रा,
संस्कृत विभाग
बी0आर0ए0 बिहार विश्वविद्यालय,
मुजफ्फरपुर

सारांश

महर्षि पाणिनि के द्वारा धतुपाठ में पठित पठ्, लिख्, कृ इत्यादि की धतुसंज्ञा की गई है। धतुसंज्ञा करने का पफल है– तिबादि प्रत्यय योजनपूर्वक पठति इत्यादि की रूपसिद्धि। पाठयति में 'पठ्' धतु से सनादि प्रत्यय परिगणित 'णिच्' प्रत्यय होने पर पाठि बनता है। धतुपाठ में 'पठ्' धतु का पाठ है किन्तु पाठि का नहीं। जब पाठि धतु ही नहीं तो तिबादि प्रत्ययों की सङ्गति भला कैसे हो सकती है? इसी समस्या के परिहार के निमित्त महर्षि पाणिनि ने 'सनाद्यन्ता धतवः' से पाठि इत्यादि की धतुसंज्ञा का विधन किया है जिसके पफलस्वरूप पाठि से तिबादि प्रत्यय हो पाठयति इत्यादि साधुरूप निष्पन्न हों। धतुपाठ में पठित धतुएँ औपदेशिक अथवा मौलिक कही जाती हैं, उन्हीं मूलधतुओं में सनादिप्रत्यय लगने से जो स्वरूप उपस्थित होता है उसे भी धतु माना गया है। सनादि प्रत्ययों से निर्मित होने के कारण इस प्रकार की धतुओं को कृत्रिम धतु कहा जा सकता है। अष्टाध्यायी में 'गुप्तिज्किद्भ्यः सन्' सूत्रा से लेकर 'कमेर्णिङ्' सूत्रा तक सन् आदि बारह प्रत्ययों का विधन हुआ है। इन्हीं सनादि प्रत्ययों के विषय में प्रस्तुत आलेख अवलोकनीय है। सनाद्यन्त को वृत्ति कहा गया है और वृत्ति के कारण पद का अर्थ संश्लिष्ट रहता है जिसके उद्घाटनार्थ विग्रहवाक्य का प्रयोग करना पड़ता है। सनाद्यन्त प्रयोगों के कारण क्रियापदों में संक्षिप्ति आती है। सम्भव है इसी संक्षिप्ति की प्राप्ति के लिए सनाद्यन्त प्रत्ययों का परिगणन किया गया हो।

मुख्य शब्द : सनाद्यन्ता धतव, सनाद्यन्त प्रत्यय, परिगणन

प्रस्तावना

महर्षि पाणिनि ने 'भूवादयो धतवः' और 'सनाद्यन्ता धतवः' से धतुसंज्ञा का प्रत्याख्यान किया है। सनादि प्रत्ययों की धतुसंज्ञा यदि नहीं की जाती तो पाठयति, पिपठिषति, पापठ्यते इत्यादि तिघन्त पदों की सिद्धि नहीं हो पाती। पठ्' धतु पाणिनीय धतुपाठ में उपदिष्ट होने के कारण 'भूवादयो धतवः' से उसकी धतुसंज्ञा हो जाती है। पफलतः 'तिबादि' प्रत्यय लगने से पठति इत्यादि रूप सिद्ध होते हैं ऋ किन्तु पाठयति में पठ् से 'णिच्' प्रत्यय हो पाठि बनता है। धतुपाठ में पठ् धतु का पाठ है, पाठि का नहीं। जब पाठि धतु ही नहीं तो 'तिबादि' प्रत्ययों की संगति भला कैसे हो सकती है। इसीलिए पाणिनि ने 'सनाद्यन्ता धतवः' से पाठि इत्यादि की धतुसंज्ञा कर उक्त अपूर्णता का निराकरण किया है।

धतु पाठ में पठित धतु में पाणिनि द्वारा उपदिष्ट होने के कारण औपदेशिक अथवा मूलधतु कही जाती है। उन्हीं मूलधतुओं में सनादि प्रत्यय लगने से जो स्वरूप उपस्थित होता है उसे भी धतु माना गया है। सनादि प्रत्ययों से निर्मित होने के कारण इस प्रकार की धतुओं को कृत्रिम धतु कहा जा सकता है।

उददेश्य

पाणिनीय व्याकरण में स्वीकृत पाँच वृत्तियों में सनाद्यान्त भी एक वृत्ति है। वृत्ति में अर्थ संश्लिष्ट रहते हैं, अतः वृत्तियों के अर्थ को ज्ञात करने के लिए विग्रह वाक्य का कथन होता है अन्यथा अर्थबोध सम्भव नहीं। उदाहरणार्थ पिपठिषति में 'सन्' के अर्थ का बोध तब तक नहीं हो सकता जब तक 'पठितुम् इच्छति' यह विग्रहवाक्य नहीं पढ़ा जाए। सनाद्यान्त रूपों को सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विशेषता है– संक्षिप्ति। जिन भावों की अभिव्यक्ति अनेक शब्दों के द्वारा की जा सकती है, उनके लिए एक ही सनाद्यन्त क्रियापद का

व्यवहार पर्याप्त है। यथा– गन्तुं प्रेरयति त्र गमयति, पुनःपुनः नृत्यति अथवा भृशं नृत्यति त्र नरीनृत्यते, पुत्राम् आत्मनः इच्छति त्र पुत्रीयति, आत्मनः सुखं काम्यति त्र सुखकाम्यति, पिता इव आचरति त्र पितरति, अलोहितो लोहितो भवति त्र लोहितायति इत्यादि सनाद्यन्त क्रियापदों से संक्षिप्ति का सहज ही समाकलन किया जा सकता है। इस अध्ययन का अपर उद्धेश्य है सनाद्यन्त प्रत्ययों के अर्थ का विवेचन और उनकी गतिविधि का समाकलन करना। इस संदर्भ में सनाद्यन्त प्रत्ययों की प्रकृति का परिज्ञान करना भी अभीष्ट है।

सनाद्यन्त धतुनिष्ठ प्रत्यय

अष्टाध्यायी में 'गुप्तिज्किद्भ्यः सन्'[1] से लेकर 'कमेर्णिघ्'[2] सूत्रा तक सन् आदि 12 प्रत्ययों का विधन हुआ है। सन्, क्यच्, काम्यच्, क्यघ्, क्यष्, आचार अर्थ में होने वाला क्विप्, णिच्, यघ्, यक्, आय, ईयघ और णिघ्–सनादि माने गए है। सनादि 12 प्रत्ययों का परिगणन निम्न कारिका में द्रष्टव्य है– सन्–क्यच्–काम्यच्–क्यघ्–क्यषो{थाचारक्विब्–णिज्–यघस्तथा।

यगाय ईयघ् णिघ् चेति द्वादशामी सनादयः।।

उक्त प्रत्ययों के लगने के बाद प्रत्ययान्त समुदाय की 'सनाद्यन्ता धतवः' से पुनःधतुसंज्ञा हो जाती है। सनाद्यन्त धतु को मूल

धतु की तरह ही माना जाता है।

उक्त सनादि 12 प्रत्यय किस अर्थ में लगते हैं इसका विवेचन यहाँ देखा जा सकता है –

[3]

धतोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा' सूत्रा से यदि इच्छा और धतु के कर्म का कर्ता एक ही हो तो इच्छा अर्थ में धतु के बाद विकल्प से 'सन्' प्रत्यय होता है। ध्यातव्य है कि इच्छा और क्रिया का कर्ता एक ही होना चाहिए अन्यथा धतु से 'सन्' प्रत्यय नहीं होगा। वैकल्पिक सन् प्रत्यय कहने का अर्थ है– विग्रह वाक्य का हो जाना। उदाहरणार्थ– देवदत्तः गन्तुम् इच्छति को कहने के लिए 'गम्' धतु से 'सन्' लगाकर देवदत्तः जिगमिषति का प्रयोग कर सकते हैं। 'सन्' के अभाव पक्ष में देवदत्तः गन्तुम् इच्छति का प्रयोग साधु है। धतु से 'सन्' के प्रयोग के लिए तीन तत्त्व आवश्यक हैं–

1. धतु का प्रयोग इच्छा अर्थ में होना चाहिए।
2. इच्छा और क्रिया का कर्म एक ही होना चाहिए।
3. क्रिया और इच्छा का कर्ता एक ही होना चाहिए।

प्रातिपदिक को नाम कहते है। राम, कृष्ण, वृक्ष आदि शब्द प्रातिपदिक अथवा नाम हैं। 'भू', 'पठ्' इत्यादि धतु प्रातिपदिक नहीं हैऋ इसलिए ये नाम भी नहीं हैं। यह तथ्य सर्वविदित है कि नाम से सुप् विभक्तियाँ तथा धतु से तिघ् विभक्तियाँ होती है। यदि किसी प्रकार नाम को भी धतु बना दिया जाए तो उस नाम को नामधतु कहा जाता है और तब उस नामधतु से 'तिघ्' विभक्तियाँ लगने लगती है न कि 'सुप्' विभक्तियाँ। जब किसी भी नाम से क्यच्, क्यघ्, काम्यच्, क्यष्, क्विप्, णिघ् अथवा णिच् प्रत्यय लगता है तब वह नाम अर्थात् प्रातिपदिक नामधतु बन जाता है। पुत्रा नाम है। पुत्रा से 'क्यच्' प्रत्यय हो पुत्रीय रूप बनता है जिसकी 'सनाद्यन्ता धतवऋ से धतुसंज्ञा हो जाती है। पुत्रीय नामधतु है न कि नाम। इससे 'तिघ्' विभक्ति लगकर पुत्रीयति इत्यादि धतु रूप बनते हैं। इसी प्रकार पुत्राकाम्यति में 'काम्यच्', कृष्णायते में 'क्यघ्', पटपटायते में 'क्यष्', अश्वति में 'क्विप्', कवयति में 'णिच्', सम्भाण्डयते में 'णिघ्' प्रत्यय दर्शनीय है। ये सात प्रत्यय विभिन्न अर्थों में विहित किए गए हैं।

गुरु : शिष्यं पाठयति इस वाक्य में दो वाक्य है–

1. शिष्यः पठति।
2. गुरुः प्रेरयति।

पढ़ रहा शिष्य प्रयोज्य कर्ता कहलाता है और पढ़ने की प्रेरणा दे रहा गुरु प्रयोजक कर्ता। 'हेतुमति च'[4] सूत्रा से प्रेरणा के विषय में धतु से 'णिच्' प्रत्यय होता है। गन्तुं प्रेरयति के लिए णिजन्त गमयति का प्रयोग उचित है। यहाँ णिजन्त गमि की 'सनाद्यन्ता धतवः' से धतुसंज्ञा होने के कारण गमयति प्रयोग सि(होता है। यह 'णिच्' प्रत्यय त्रिाध प्रवृत्त होता है–

1. प्रातिपदिकों से
2. चुरादिगणीय धतुओं से
3. प्रयोज्य–प्रयोजक व्यापार वाच्य होने पर।

किसी भी क्रिया के पुनः पुनः अथवा अधिक होने को क्रिया समभिहार कहते हैं। क्रिया समभिहार में धतु से 'यघ्' प्रत्यय होता है। 'पठ्' धतु से 'यघ्' प्रत्यय होने पर पापठ्य रूप बनता है जिसकी 'सनाद्यन्ता धतवः' से धतुसंज्ञा होने पर तिघन्त रूप पापठ्यते हो जाता है जिसका अर्थ है पुनः पुनः पठति अथवा भृशं पठति।

इस प्रकार 'यघ्' प्रत्यय का विकल्प से लुक् ;लोपद्ध हो जाता है। 'यघ्' का लुक् होने पर उस यघ्लुगन्त धतु की 'सनाद्यन्ता धतवः' से धतुसंज्ञा कर इन यघ्लुगन्त धतुओं का प्रयोग किया जा सकता है। यघ् और यघ्लुगन्त में विकरण, पद, द्वित्व विधि और अभ्यास कार्य की दृष्टि से अन्तर देखा जाता है।

सार्वधतुके यक्'[5] सूत्रा से भाववाची तथा कर्मवाची सार्वधतुक प्रत्यय परे होने पर धतु से 'यक्' प्रत्यय होता है। इसका तात्पर्य है कि

किसी भी धतु का भाववाच्य तथा कर्मवाच्य का रूप बनाने के लिए 'यक्' प्रत्यय लगाया जाता है।

धतु से विहित प्रत्यय दो प्रकार के होते हैं–

1. सार्वधतुक
2. आर्धधतुक

लट्, लोट्, लघ्, विधिलिघ्– इन चार लकारों के प्रत्यय सार्वधतुक हैं और लिट्, लुट्, लृट्, लेट्, लुघ्, आशीर्लिघ्, तथा लृघ्–इन सात लकारों के प्रत्यय आर्धधतुक हैं। धतुओं से यक् प्रत्यय तभी होता है जब भाववाची और कर्मवाची सार्वधतुक प्रत्यय परे हों। इसका अर्थ यह हुआ कि भाववाची तथा कर्मवाची आर्घधतुक प्रत्यय परे होने पर धतु से 'यक्' प्रत्यय नहीं होता।

गुपूधूपविच्छपणिपनिभ्यः आयः'[6] सूत्रा से सूत्राोल्लिखित धतुओं से आय प्रत्यय होता है। 'गुप्' धतु से आय प्रत्यय हो गोपाय स्वरूप बनता है जिसकी 'सनाद्यन्ता धतवः' से धतुसंज्ञा हो जाने से 'शप्', 'तिप्' प्रत्यय हो गोपायति रूप सि(होता है।

'इतेरीयघ्'[7] सूत्रा से 'इत्' धतु से ईयघ् प्रत्यय होता है। 'इत्' धतु धतुपाठ में नहीं पढ़ी गई है। यह सौत्रा धतु है जो घृणा अर्थ में प्रयुक्त होती है। जो धतु सूत्रापाठ ;अष्टाध्यायीद्ध में पढ़ी गई है किन्तु धतुपाठ में नहीं उसे सौत्रा धतु कहते हैं। 'इत्' धतु से ईयघ् प्रत्यय हो इतीय की 'सनाद्यन्ता धतवः' से धतु संज्ञा हो जाती है और 'तिप्' प्रत्यय लगने पर इतीयते की सिद्धि होती है।

निष्कर्ष

यहाँ सनादि 12 प्रत्ययों का स्वरूपदिग्दर्शन करते हुए परिगणन मात्रा किया गया है। उक्त सनादि प्रत्ययों के विशेष परिज्ञान के निमित्त मूल ग्रन्थ अध्येतव्य हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *पाणिनीय सूत्रा – 3.1.5*
2. *तदेव–3.1.30*
3. *तदेव –3.1.7*
4. *तदेव –3.1.16*
5. *तदेव – 2.1.67*
6. *तदेव –3.1.28*
7. *तदेव – 3.1.29*